ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 53-56
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

संस्कृत–काव्य–परम्परा का विमर्शात्मक–अध्ययन

डॉ0 जनार्दन झा

सहायक प्रोफेसर– संस्कृत, राजकीय महिला महाविद्यालय, सलेमपुर, देवरिया (उ0प्र0), भारत

Received-05.04.2023, Revised-11.04.2023, Accepted-15.04.2023 E-mail: drjanardanjha@gmail-com

सारांशः ***यह अध्ययन उच्च शिक्षा के क्षेत्र में संस्कृत एवं संस्कृत काव्य परम्परा के प्रयास को रेखाङ्कित करता है। यह शोधपत्र पूर्व के अध्ययन विषय से अलग है, एवं समाज के लिए महत्वपूर्ण है। यह शोध–पत्र पुस्तकालयीय विश्लेषणात्मक विधि पर आधारित है। इसमें अन्वेषणपूर्ण अनुसंधान और वर्णनात्मक अनुसंधान का प्रयोग किया गया है। इसमें प्रायः परिकल्पनाओं का परीक्षण करने के बजाय उनके निर्माण करने पर बल दिया गया है। यह अध्ययन शोधार्थियों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।***

कुंजीभूत शब्द– संस्कृत, परम्परा, प्राचीन, गौरवास्पद, पुरुषार्थ, वैदिक, उत्पत्ति, रसास्वादन, कालखंड, आर्य, आश्रम, क्रान्तदर्शी ।

संस्कृत–काव्य की परम्परा अतीव पुरातन, बहुमुखी एवं विशाल वाङ्मय से युक्त है। काव्य के माध्यम से पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति संभव हो सकती है। संस्कृत काव्य परम्परा के रसास्वादन हेतु उसके नानाविध कालखण्डों का अध्ययन परमावश्यक प्रतीत होता है।

सर्वप्रथम वैदिक– युग की बात करें तो संस्त–काव्य का प्रादुर्भाव वेदमन्त्रों के रूप में हुआ है। वैदिक काल से ही संस्कृत–काव्य का श्रीगणेश माना जाता है। वैदिक युग एक ऐसा समय था, जब आर्यावर्त में आर्यों का शासन था। जहां धार्मिक संस्कार, यज्ञकर्म, योग–साधना, सांस्कृतिक कार्यक्रम इत्यादि नियमित रूप से सम्पन्न होता था। आर्यों का साहित्य 'वेद' था। वेद का अर्थ ज्ञान और इसका अंश काव्य होता है। इन काव्यों को 'ऋचा' नाम से जाना जाता था और इनके दर्शक 'ऋषि' थे, जो अपने आसपास के सम्पूर्ण वातावरण से प्रभावित होकर ज्ञान– विज्ञान का प्रत्यक्ष दर्शन कर, अपने मन की सम्वेदनाओं की काव्य के माध्यम से समस्त जन को अनुभूति कराते थे। वहीं ऋषि–मुनियों के द्वारा चिन्तन, मनन और निदिध्यासन कर ऋचाओं की रचना की गई, और वही ऋषि मुनि कवि पदारूढ हो गये। ऋग्वेद में इसी प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है–

अवः परेण पितरं यो
अस्यानुवेद पर एनावरेण।
कवीयमानः क इह प्रवोचद्
देवं मनः कुतो अधिप्रजात।।[1]

कवि ने क्रान्तदर्शी कवित्व, दिव्य व्यक्तित्व अपने निर्मल भाव या अमरवाणी (देववाणी) के माध्यम से विनम्रता, व्यावहारिक दक्षता अथवा पारस्परिक समरसताओं की सारस्वत भूमि से काव्य का सृजन किया। उसकी काव्य प्रतिभा को 'ब्रह्म' पद की संज्ञा दी गई। काव्य प्रतिभा 'ब्रह्म' ऋतसदन से समुत्पन्न है। जैसे–

प्र ब्रह्मैतु सदना.तस्य वि
रश्मिभि' ससृते सूर्योमाः।
वि सानुना पृथ्वी संस्त्र
उर्वी पृथु प्रतीकमध्येऽध्नो अग्निः।।[2]

कवि के क्रान्तदर्शी होने के कारण वे सामान्य सृष्टि अप्रत्यक्ष वस्तुओं के भावों को अनुभव कर उन्हें व्यक्त करते थे। इसीलिए उनके काव्यों को 'सत्काव्य' की संज्ञा दी गई, जिसके समक्ष यश, धन, देश और राज्य को भी संकीर्ण माना गया। जैसे–

व्रीडा चेत्किमु भूषणैः सुकविता यद्यस्ति राज्येन किं।[3]

कवि के इस दुर्लभ तत्त्वात्मक तथ्य को प्रस्तुत करने वाले ह्रदय कवि को द्रष्टा, स्रष्टा या प्रजापति की संज्ञा दी जाती है। यायावरवंशोत्पन्न आचार्य राजशेखर का कथन है कि– 'सोये हुए महाकवि की वाणी शब्द, अर्थ का ज्ञान करा देती है'। वैदिक युगीन कवियों के समक्ष एक विकट सनातन प्रश्न उपस्थित था कि वह कौन देव है, जिसका यज्ञ में आवाहन करना है? ऐसी अनेक समस्याएं विकराल रूप ले रही थीं। दिव्य प्रकृति के ये ऋषि–कवि एक ऐसा कार्य किये, जिससे यह उत्तरोत्तर वर्धनशील देवत्व–परम्परा मानवसत्ता के अन्दर अभिव्यक्त हो सके। उन्होंने अपना प्रथम देव 'अग्नि' को, द्वितीय देव 'इन्द्र' को तथा तृतीय देव 'सूर्य' को माना, जो समस्त प्राणी, सुर–असुर, पशु–पक्षी, पेड़–पौधे, जो इनके स्रष्टा एवं जीवन के शक्तिदाता हैं। इन सभी कलाओं को देखकर ऐसा लगता है कि वैदिक युगीन कवि के ह्रदय में भावों की विद्युत चमकती थी, उनके मस्तिष्क में अविरल ज्ञान की गंगा प्रवाहित थी, जिसके चमत्कार के प्रतिरूप वे सूक्तों में प्रतिष्ठित करते थे।

वैदिक वाङ्मय के अन्तर्गत सर्वप्रथम 'वेद' का भान अनायास ही हो जाता है। वेद अर्थात् ज्ञान के चार भाग हैं– संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, एवम् उपनिषद्। संहिता के अंतर्गत मन्त्रों का संकलन हुआ है। इस संहिता के चार खण्ड हैं– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।

तदुपरान्त कर्मकाण्ड, उपासना काण्ड और ज्ञानकाण्ड के आधार पर ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद् की रचना हुयी। ब्राह्मणग्रन्थों में ऋचाओं की विधिपूर्वक व्याख्या की गई है। आरण्यकग्रन्थों में वीतराग ऐसे महापुरुष के विषय में चर्चा है जो अरण्य का सेवन कर श्रद्धा और शान्त भाव से भगवान् की उपासना में तल्लीन रहते थे।

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

उपनिषद् ग्रन्थ वेद का अन्तिम भाग है। यह ज्ञानकाण्ड से सम्बन्धित है, जिसमें वैदिक ऋचाओं की विस्तृत व्याख्या सन्निहित है। ऋग्वेद प्राचीनतम वैदिक ग्रन्थ है। यह अन्य तीन वेदों से सम्बन्धित है। वर्तमान में इसकी पांच शाखाएं उपलब्ध हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं– शाकल, वाष्कल, आश्वलायन, शांखायन और माण्डूकायन।

यजुर्वेद को यजुष् भी कहते हैं। यजुष् का तात्पर्य पूजा और यज्ञ से है। यजुर्वेद दो भागों में विभक्त है– कृष्ण– यजुर्वेद एवं शुक्ल– यजुर्वेद। इन दोनों वेदों को यजुर्वेद की संज्ञा दी गई है। यही वेद कर्मकांड कि आधार है। शुक्ल यजुर्वेद की संहिता को' वाजसनेयि– संहिता' कहते हैं। कृष्ण यजुर्वेद की पचासी शाखाओं में केवल कठ, मैत्रायणी, कपिष्ठल और तैत्तिरीय यही चार शाखाएं अभी उपलब्ध हैं।

सामवेद का यज्ञ सम्पादन के समय उच्च स्वर से गानार्थ प्रयोग किया जाता है। इस वेद में १८७५ ऋचाए हैं, जिसमें से १७६७ ऋचाएं ऋग्वेद से ली गयी हैं और शेष १०८ ऋचाएं अर्वाचीन हैं। अथर्ववेद बीस काण्डों विभक्त चौथा वेद है। यह वेद ऋग्वेद के ही १२ सौ ऋचाओं से आच्छादित है।

पुराणयुग– पुराणों को भारतीय संस्ति का आधार और मेरुदंड कहा जाता है। इन पुराणों में सृष्टिक्रमव्यवस्था, वंशाघ्नुचरित, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र और राजनीति इत्यादि का विस्तार से समाविष्ट किया गया है।

प्राचीन काल में जो जीवित हो, उसे पुराण कहा जाता है। पुराण पांच लक्षणों से युक्त है, जैसेः–

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चेति पुराणं पञ्चलक्षणम्।।४

१८ पुराण हैं, जिसका श्लोक इस प्रकार हैः–

मद्वयं भद्वयं चौव ब्रत्रयं वचतुष्टय।

अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक–पृथक्।। अर्थात् मार्कण्डेयपुराण, मत्स्यपुराण, भागवतपुराण, भविष्यपुराण, ब्रह्मपुराण, ब्रह्मावैवर्तपुराण, ब्रह्माण्डपुराण, विष्णुपुराण, वराहपुराण, वामनपुराण, वायुपुराण, अग्निपुराण, नारदपुराण, पद्मपुराण, लिंगपुराण, गरुडपुराण, कूर्मपुराण, और स्कन्द–पुराण को लेकर कुल अठारह पुराणों के नाम इस श्लोक में समाहित है। श्रीमद्भागवत पुराण हिन्दी भक्तिकाव्य का मूल स्रोत है। इसमें बारह स्कन्ध, तीन सौ पैंतीस अध्याय और अठारह हजार श्लोक हैं। इसके सभी स्कन्धों में 'प्रेमलक्षणा' भक्ति का निरूपण किया गया है। श्रीमद्भागवत पुराण की रचना शौनक तथा सूत संवाद के रूप में हुयी है। इस पुराण को शुकदेव जी ने राजा परीक्षित को सर्वप्रथम श्रवण कराया था। इसमें पद्यशैली और गद्यशैली दोनों ही का प्रयोग हुआ है। इसके अध्ययन से मोक्षावाप्ति की जा सकती है। इसमें प्रा.तिक चित्रण और रासलीला का भी विस्तृत वर्णन है।

वैदिक–काल की समाप्ति के पश्चात् एक नये युग के रूप में रामायण– महाभारत की काव्य परंपरा का प्रादुर्भाव होता है। वैदिक युग की समाप्ति पर मानवता, ब्रह्मपरायणता, देवपरायणता के स्तर पर अनेक परिवर्तन होते हैं। महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण महाकाव्य भारतीय परंपरा के अनुसार महाभारत की रचना से सहस्रों वर्ष पहले त्रेतायुग में लिखा गया है। निर्विवाद रूप से वाल्मीकि रामायण ही विश्व का प्रथम संस्त काव्य है। इस तरह के महाकाव्यों की वर्णनशैली में अतिशयता अनायास ही आसन ग्रहण कर लेती है। संपूर्ण रामायण में सात कांडों में आबद्ध है, जो इस प्रकार है : बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकांड, किष्किन्धाकाण्ड, सुंदरकांड, लंकाकांड, और उत्तरकाण्ड।

महाभारत के रचनाकाल के विषय में आचार्यों में मतभेद रहा है परन्तु मीमांसकों के अनुसार, महात्मा बुद्ध के पहले तक निश्चित ही महाभारत की रचना हो चुकी थी। महर्षि वेदव्यास इसके रचनाकार हैं। महाभारत को शतसाहस्री, जयसंहिता के नाम से भी जाना जाता है। इस जयसंहिता में अठारह पर्व हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं:– आदि पर्व, सभा पर्व, वन पर्व, विराट् पर्व, उद्योग पर्व, भीष्म पर्व, द्रोण पर्व, कर्ण पर्व, शल्य पर्व, सौप्तिक पर्व, स्त्री पर्व, शान्ति पर्व, अनुशासन पर्व, अश्वमेध पर्व, आश्रमवासी पर्व, मौसल पर्व, महाप्रस्थानिक पर्व, और स्वर्गारोहण पर्व। महाभारत के ऊपर छत्तीस टीकाएं लिखी गयी हैं।

वैदिक युग के उपरान्त महाकाव्य काल का शुभारम्भ होता है। वैदिक युग या रामायण, महाभारत के सकृश उस युग की असीम, विस्तृत, अनन्त प्रकृति के सौन्दर्यगत मनोभावों की सम्वेदनाओं एवम् अदृश्य वस्तुओं तक की काव्य परिधि नहीं रह जाती है। महाकाव्य काल की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वे भारतीय संस्कृति के उदात्त भावों और अभिरुचि को आकृष्ट करने की आकांक्षा रखते थे। वे काव्य के रस को प्रधान मानकर काव्यों का सृजन करते थे। असहायों के प्रति करुणा, मानवता की उपासना, दीन–दुखियों के प्रति सहज भाव रखते थे। महाकाव्य काल में तीन मुख्य कवि हुआ करते थे। सारस्वत, औपदेशिक और आभ्यासिक। जो कवि अपने पूर्व जन्म के संस्कारों से काव्य प्रतिभा को प्राप्त करते थे, वे कवि 'सारस्वत' कहलाते थे, जो कवि मन्त्रोपदेश के आधार पर कवित्व गुण को प्राप्त करते थे, वे औपदेशिक कवि कहलाते थे। इसी प्रकार जो कवि शास्त्राभ्यास के द्वारा कवित्व शक्ति अर्जित करते थे, वे आभ्यासिक कवि कहलाते थे।

संस्कृत महाकाव्य काल में कविकुल गुरु महाकवि कालिदास सर्वोपरि हैं। महाकवि कालिदास ने अपने काव्यों में विलक्षण तथा सुकुमार कल्पना की अभिव्यक्ति की है, जो अनुकरणीय और दर्शनीय है। कालिदास ने अपने काव्यों में मन्दाक्रान्ता छन्द का अतिसुंदर प्रयोग किया है। आचार्य क्षेमेन्द्र के द्वारा कालिदास के मंदाक्रान्ता छन्द की प्रशंसा इस प्रकार की गयी है–

सुवशा कालिदासस्य मन्दाक्रान्ता विराजते।
सदा श्रमकरस्येव कांबोजतुरगांगना।।

महाकाव्य काल में ही महाकवि भारवि ने भी अपने महाकाव्य 'किरातार्जुनीय' में एक श्लोक लिखा है, जिसमें एकमात्र 'न' व्यञ्जन वर्ण

ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

का ही प्रयोग किया है। जैसे–

न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु।
नन्नोऽनुन्नो ननुन्नेनो नानेनानुन्ननुन्ननु।।[3]

इसी प्रकार महाकवि माघ ने अपने 'शिशुपालवध' में भारवि के प्रयास को आगे बढ़ाया है। जैसे–

जजौजोजाजिजिज्जाजि तं ततोतितितातितु।
भाभोभीभाभिभूभाभूराराररिररीररः।।[4]

ऐतिहासिक ग्रन्थों में पौराणिक एवम् ऐतिहासिक तथ्य परस्पर अतीव शक्त्या गुंथे हुये से प्रतीत होते हैं। ऐतिहासिक 'सामन्तयुगीन' संस्कृत काव्य का प्रारंभ महाराज श्रीहर्ष के शासनकाल से है, जब संपूर्ण भारत अस्त–व्यस्त था।

ऐसा कोई साधन उपलब्ध नहीं था, जिससे संपूर्ण उत्तरापथ और दक्षिण भारत को एक सूत्र में जोड़ा जा सके। ऐसी स्थिति में देश को विखंडित करके लघुकाय सामंती राज्यों का प्रादुर्भाव संभव हुआ, जो आठवीं शताब्दी से बारहवीं शती ई. तक पुष्पित और पल्लवित होते रहे। इस ऐतिहासिक कालखंड ने सामन्तयुगीन संस्कृत काव्य का संवर्धन और उत्सृजन किया। इस युग के महाकवि आचार्य विद्याकर पण्डित, महाकवि राजशेखर, मालवाधीश भोजराज, पांड्यनरेश के राजकवि हस्तिमल, धारानगरी के शासक मुञ्जराज थे, जिन्होंने 'वाक्पति की उपाधि' प्राप्त की। मालवाधीश भोजराज का संस्कृत काव्य साहित्य में अतिमहत्वपूर्ण योगदान रहा, जो आज भी विद्या के प्रचार–प्रसार के लिए प्रसिद्ध है। उनके काव्यों में नीतिशास्त्र, ज्योतिष, अलंकार, धर्मशास्त्र, कोष, व्याकरण इत्यादि शास्त्रों के ज्ञान–विज्ञान का उदात्त वर्णन हुआ है। कवि भोजराज के विषय में प्रभावकचरित ने लिखा है–

भोजव्याकरणं ह्येतत् शब्दशास्त्रं प्रवर्तते।
असौ हि मालवाधीशो विद्वच्चक्रशिरोमणिः।।

भारतीय इतिहास में कवि कल्हणकृत 'राजतरंगिणी' एक उच्च अट्टालिका के समान विद्यमान है। यह काव्य ग्रंथ के साथ–साथ ऐतिहासिक ग्रंथ भी है। कवि कल्हण अत्यंत सुसंस्कृत तथा स्वतंत्र विचारक थे। ऐतिहासिक ग्रंथ राजतरंगिणी में काश्मीर के राजाओं के इतिहास का वर्णन प्राप्त होता है। जोनराज ने राजतरंगिणी की की रचना को आगे बढ़ाया। इनके शिष्य श्रीवर ने 'जैन– राजतरंगिणी' की रचना की। बारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जल्हण ने 'सोमपालविलास' नामक महाकाव्य की रचना की थी, जिसमें काश्मीर के राजा सोमपाल का जीवनचरित अंकित है। जैनसाधु कलिकालसर्वज्ञ हेमचंद्र ने 'कुमारपालचरितम्' नामक महाकाव्य की रचना की। जिनहर्ष द्वारा 'वस्तुपालचरित' काव्य लिखा गया, जो वस्तुपाल के जीवनचरित्र पर आधारित है। चौदहवीं शताब्दी ई. के उत्तरार्द्ध में स्त्रीकवि गंगादेवी ने एक काव्य लिखा, जिसे 'मधुराविजय' नाम से जाना जाता है। जैनकवि नयचन्द्रकृत 'हम्मीरकाव्य' एक ऐतिहासिक काव्य है, जो पन्द्रहवीं शताब्दी ई. में लिखा गया है। इसी प्रकार सोलहवीं शताब्दी में रुद्रकवि द्वारा 'राठौरवंशकाव्य' लिखा गया।

संस्कृत काव्य परंपरा में गीतिकाव्य अत्यंत प्राचीन है। वेदों में सूक्त, यज्ञ और अभिचार संबन्धी गायन प्रस्तुत किये गये हैं। परन्तु सर्वप्रथम महाकवि कालिदास ही संस्कृत गीतिकाव्य के रचयिता हैं। कालिदासकृत 'मेघदूत' काव्य को प्रथम गीतिकाव्य का गौरव प्राप्त है। इसी काव्य का अनुकरण करके धोई ने पवनदूत नामक गीतिकाव्य लिखा। कवि लक्ष्मी दास ने शुकसंदेश नामक गीतिकाव्य लिखा। सोलहवीं शताब्दी के कवि गोस्वामी ने 'हंसदूत' नामक गीतिकाव्य लिखा। महाकवि कालिदास ने दूसरे गीतिकाव्य के रूप में 'ऋतुसंहार' काव्य को लिखा। इस ऋतुसंहारकाव्य में षट्ऋतुओं का वर्णन है–

प्रभिन्नवैदूर्यनिभास्तृणांकुरैः
समाचिता प्रोत्थितकंदलीदलैः।
विभाति शुक्लेतररत्नभूषिता वरांगनेव क्षितिरिन्द्रगोपकैः।।[5]
सदा मनोज्ञाम्बुदनादसोत्सुकं
विभातिविस्तीर्णकलापशोभित।
ससम्भ्रमालिंगनचुंबनाकुलं प्रवृत्तनृत्तं कुलमद्य बर्हिणाम्।।[6]
विलोलनेत्रोत्पलशोभिताननैर्मृगैः
समन्तादुपजातसाध्वसैः।
समाचिता सैकतिनी वनस्थली
समुत्सुकत्वं प्रकरोति चेतसः।।[7]

एक दूसरा ग्रंथ 'श्रृंगारतिलक' नाम से प्रचलित है, जिसका रचनाकार महाकवि कालिदास को ही माना जाता है। यह भी एक गीतिकाव्य है। इसमें भी मनोहारी वर्णन है। जैसे–

इंदीवरेण नयनं सुखमंबुजेन
कुंदेनदंतमधरं नवपल्लवेन।
अंगानि चंपकदलैश्च विधाय वेधाः
कांते कथं घटितवानुपलेन चेतः।।

भगवान् आदि शंकराचार्य स्तोत्र काव्य के निर्माता हैं। इन स्तोत्रों में विष्णु स्तोत्र, देवीस्तव, शिवस्तोत्र, दुर्गास्तोत्र इत्यादि प्रमुख हैं। 'देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र' का एक श्लोक यहां प्रस्तुत है–

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

जगदंबविचित्रमत्र किं
परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि।
अपराधपरंपरापरं
नहि माता समुपेक्षते सुत।।[१०]

इसी तरह उपदेश काव्य, नीतिकाव्य, और स्तुति काव्य आदिकाल में पुष्पित और पल्लवित होते हुए काव्यों में सर्वोच्च शिखर पर पर पहुंच कर भारतीय संस्कृति में संस्कृत काव्य परंपरा को प्रतिष्ठित भी किया। निस्संदेह बड़े से बड़े शास्त्र के ज्ञाता, अलंकार के मर्मज्ञ कवित्वशक्तिविहीन हैं, जिन्हें संस्कृत काव्य का यथोचित ज्ञान नहीं है। इति शुभम्।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

१. ऋग्वेद, मण्डल १, सूक्त १६४, मन्त्र १८, सम्पादक– महर्षि दयानन्द सरस्वती, प्रकाशन संस्थान– सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली।
2. ऋग्वेद, मण्डल ७, सूक्त ३६, मन्त्र १, संपादक– महर्षि दयानन्द सरस्वती, प्रकाशन संस्थान– सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली।
३. भर्तृहरिशतक, नीतिशतकम्, श्लोक २१, रचनाकार– कवि भर्तृहरि, टीकाकार– रामजी शर्मा, प्रकाशक– महाशय श्यामलाल वर्मा आर्य बुक्सेलर, बरेली, प्रकाशन वर्ष– १९२९, भाषा– संस्कृत और हिन्दी।
४. विष्णुपुराण, ३. ६. २४, रचनाकार– महर्षि वेदव्यास, भाषा– संस्कृत और हिन्दी, प्रकाशक– हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज, प्रकाशन वर्ष– २००७, अनुवादक– तारिणीश झा और घनश्याम त्रिपाठी।
५. किरातार्जुनीय, सर्ग– १५, श्लोक १४, रचनाकार– महाकवि भारवि, भाषा– संस्कृत और हिन्दी, प्रकाशक– साहित्य भंडार, मेरठ–२, प्रकाशन वर्ष– २००४, व्याख्याकार– डॉ कृष्ण कुमार।
६. शिशुपालवध, रचनाकार– महाकवि माघ।
७. ऋतुसंहार, द्वितीय सर्ग, श्लोक– ५, रचनाकार– महाकवि कालिदास, व्याख्याकार– आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी, भाषा– संस्कृत और हिन्दी, प्रकाशक– चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष– २०१२.
८. ऋतुसंहारम्, द्वितीय सर्ग, श्लोक–६, रचनाकार– महाकवि कालिदास, व्याख्याकार– आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी, भाषा– संकृत और हिन्दी, प्रकाशक– चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष– २०१२.
९. ऋतुसंहार, द्वितीय सर्ग, श्लोक ९, रचनाकार– महाकवि कालिदास, व्याख्याकार– आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी, भाषा– संस्कृत और हिन्दी, प्रकाशक–चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष– २०१२.
१०. नित्यकर्म– पूजाप्रकाशस्थ– देव्यपराधक्षमापन– स्तोत्र, श्लोक–११, पृष्ठ– ३०१, रचनाकार– आदि शंकराचार्य, लेखक– पं० श्रीरामभवनजी मिश्र और लाल बिहारी जी मिश्र, प्रकाशक– गोविन्द भवन कार्यालय, गीता प्रेस, गोरखपुर, संवत्– २०५३।

*****